हमारी पत्रकारिता*: एक नज़र

मु० र० आबिद

* यहाँ हमारी पत्रकारिता के माने में विश्वपत्रकारिता, मुस्लिम पत्रकारिता, भारतीय पत्रकारिता, उर्दू पत्रकारिता और शिया पत्रकारिता है।

भावनाओं और आशाओं का जीता-जागता बुद्धिमान संयोग बोलने को न बेचैन होगा तो और कौन होगा? फिर कहीं उसे बोलने के साथ 'कहना' भी आ जाये तो वह ज़बान रोके, होंट सिये क्यों रहने लगा? उसकी ज़बान बस चुपके-चुपके चटख़ारे लेने के लिए नहीं होती बल्कि वह खुल भी सकती है, खिल भी सकती है, तो गुल खिला भी सकती है, फुलवारी बना सकती है, संसार में आग भी लगा सकती है, अमृत उगा सकती है, विष भी घोल सकती है। ज़बान का क्या कहना! उसके कहने का क्या कहना! अब तो जग ज़ाहिर है, ज़बान की ऐसी चलती है कि बस उसी की चलती है। यही ज़बान संसार पर राज करती है, यही राज बाँटती भी है। चाहे कहीं साम्राज्य हो, तानाशाही हो, लोकतन्त्र हो, राष्ट्रपति प्रकार का राज हो, हर जगह यही 'ज़बान राज' ही होता है, ज़बान की डिक्टेटरी चलती है।

जब मनुष्य की एक ज़बान की बात ऐसी है जिस की अनकही करने का साहस किसी में नहीं होता, तो सोचिए लेखनी/क़लम की क्या बात होगी, लिखने के क्या कहने!! ज़बान की जितनी भी चलती है इसी क़लम के बलबूते चलती है नहीं तो क़ायदे क़ानून नियम से 'ज़बानी' (मौखिक) की क्या पूछ? जहाँ ज़बान की न चले, क़लम की चलती है जो समय और स्थान की सीमाओं को भी पार कर जाती है। जहाँ ज़बान की पहुँच सिमट कर रह जाए, वहाँ से क़लम का राज शुरु होता है। इसका अन्त कहाँ हो, किसे पता! यह आदमी की शिक्षा का ईश्वरीय माध्यम जो ठहरा *'अल्-ल-म बिल क़लम'*..... वह भी *'मालम या'लम'* वाले अथाह ज्ञान का शिक्षा माध्यम।

ऐसा लगता है मनुष्य अपनी सभ्यता के पहले चरण से ही क़लम संभालने लगा, क़लम से बात करने लगा, क़लम को अपने बोल देने लगा। यह सब इतिहास पूर्व की बात है, इसलिए निश्चित रूप से कुछ कहा नहीं जा सकता। आशा है क़लम ने संभलते ही 'पत्र' ढूँड निकाला होगा (हो सकता है क़लम को ढूँड निकालने में पत्र का हाथ हो) क़लम यानी लेखनी के आगे बढ़ते क़दमों ने पत्र के एक ख़ास रूप Circular/परिपत्र/गश्तीपत्र की जान-पहचान कराई होगी। आगे सामान्य सम्बोधन वाले पत्र (जिसमें आम सन्देश या जनरुचि की सूचना हो) अधिसूचना और आदेश आते हैं। सभ्यता के विकास के साथ-साथ तकनीकी प्रगति से संचार माध्यमों को भी विस्तार मिला। वहीं क़लम के नये-नये रूप सामने आये। इसी में साधारण सूचना, अधिसूचना और गश्ती-पत्र का कुछ विकसित और सामाजिक रूप पत्रकारिता के नाम से उभरा।

साइन्स और टेक्नालॉजी और उसके अन्तर्गत संचार के तरीक़े और संचार माध्यमों की लगातार प्रगति, सामजिक नागरिक विकास और संसार के बदलते हुए दृश्य-पत्र से पत्रकारिता का विकास होता रहा। आज के IT युग ने इलेक्ट्रानिक मीडिया, कम्प्युटर और इन्टरनेट के कारण पत्रकारिता को नये आयाम से पहचान कराई।

पत्रिकाओं को प्रकाशन अवधि के आधार पर निम्नलिखित प्रकारों में बाँटा जा सकता है: (1) दैनिक (2) साप्ताहिक (3) अर्धमासिक/पाक्षिक (4) मासिक (5)द्वमासिक (6) त्रैमासिक (7)वार्षिक।

कुछ पत्र सप्ताह में दो बार भी निकलते हैं। इसी तरह कुछ पत्रिकाएं विशिष्ट अवधि की होती है मगर वे इतनी सामान्य नहीं होती, इसलिए उन्हें ऊपर के वर्गीकरण में जगह नहीं दी गई।

[यदि पत्रकारिता की आला कमान मासिक या और अधिक अवधि वाली पत्रिकाओं का पत्रकारिता से सम्बन्ध न माने, तो मुझे कोई आग्रह न होगा।]

आम धारणा से इन पत्रिकाओं की लोकप्रियता उनकी प्रकाशन अवधि के समानुपाती होती है। दैनिक साधारणतयः दूसरे दिन रद्दी की दुकान चला जाता है। साप्ताहिक और पाक्षिक पत्रिकाएं कुछ दिन के अध्ययन के लिए होती हैं। मासिक पत्रिकाएं कुछ ज़्यादा दिन और कुछ अधिक गम्भीर अध्ययन के लिए होती हैं। द्वमासिक और त्रैमासिक पत्रिकाएं आम तौर से ज्ञान-वैज्ञानिक और शोध वाली होती है, इसलिए उसी तरह के गम्भीर अध्ययन में आती है और प्रायः निजी तौर पर भी सुरक्षित रखी जाती है। यह सब आम धारणा की बात है। कहीं-कहीं कभी यह बात नहीं होती। आज समाचार-पत्र भी समाचार, समाचार-समीक्षा के अलावा बहुत कुछ ज्ञान-विज्ञान का मसाला देते हैं। इससे कम से कम ज्ञान दोस्तों में उनका मूल्य दूसरे दिन रद्दी में डालने वाला नहीं होता। फिर भी जनसाधारण में उन्हें रद्दी की दुकान जाने से कुछ रोक नहीं पाता। वहीं कुछ ऊँची रुचि वाले पाठक लाइब्रेरियों से अलग हटकर भी समाचार-पत्रों की पूरी की पूरी फ़ाइल सुरक्षित कर ले जाते हैं कि आज ऐसे अख़बारों की भी फ़ाइलें हमें मिल जाती हैं जो स्वयं कब के 'स्वर्ग' सिधार चुके होते हैं।

विषय के अनुसार पत्रिकाओं को इस तरह बाँट सकते हैं: (1) समाचार-पत्र (साधारणतयः दैनिक होते हैं परन्तु Newsletter के रूप में पाक्षिक भी हो सकते हैं।) (2) समीक्षा-पत्र जो समाचारों पर समीक्षा और खोजी समाचारों पर आधारित होते हैं। (3) साहित्यिक (4)विशेष रुचि के जैसे फ़िल्मी या खेल सम्बन्धित (5) ज्ञान-वैज्ञानिक विष्टिता और शोध वाली पत्रिकाएं (6) सरकारी (ग़ज़ट) जिनमें समाचार से ज़्यादा सरकारी सूचना और शासनादेश छाये रहते हैं। इनमें कोई और प्रकार भी मिल सकते हैं जो मेरी हड़बड़ी या अज्ञानता के कारण गिनाये न जा सके।

मीडिया के आधार पर पत्रकारिता का वर्गीकरण यूँ हो सकता हैः-

(1) मुद्रणीय (2) इलेक्ट्रानिक (3) इन्टरनेट जिसमें समाचार पत्रों और पत्रिकाओं के इन्टरनेट अंकों के अतिरिक्त ब्लाग और ट्वीटर जैसे सामाजिक 'स्थल' भी आते हैं।

इसी तरह प्रकाशन प्रकार और विषय की विशेषता के अनुसार पत्रिकाओं के अंकों को (1)साधारण और (2) विशेष कह सकते हैं।

यह तो पत्रकारिता के प्रकार की बात थी। अब कुछ पूर्णरूप से पत्रकारिक्ता की बात की जाए। अपने विषय, मात्रा और मानक के लेहाज़ से पत्रकारिता ने भी एक सीमा तक प्रगति की है। मीडिया के विकास और संसार के Global गाँव के रूप में उभरने और (कम से कम दावे की हद तक) स्वतन्त्र पत्रकारिता को देखते हुए यह कोई अनहोनी नहीं बल्कि यह विकास हर माने में हर दिशा से वर्तमान स्तर और गुणवत्ता से कहीं अधिक हो सकता था यदि पत्रकारिता अपने असली प्रवाह में रहती। किन्तु ऐसा लगता है कि विश्व पत्रकारिता को दिशा देने वाली कोई बाहूय अदृश्य शक्ति है। आवश्यक्ता भी है, जग की आम चाहत और माँग भी है कि विश्व पत्रकारिता को सत्य का पक्षधर, न्यायवादी और वास्तव में मानवतावादी होना चाहिए। परन्तु विश्व पत्रकारिता है कि सच्चे पत्रकारीय आकांक्षाओं से कटी-कटी सी प्रतीत होती है जिसके 'पंक्तियों के मध्य' में विश्ववादी मानववादी प्रकार की झलक नहीं दिखाई पड़ती। इसके पीछे एक-ध्रुवीय विश्व राजनीति है या आर्थिक ध्रुवीय शक्तियों की धौंस का काम है या कुछ और, पता नहीं, न सही पता लगता मालूम पड़ता है। वैसे यह Writing on wall है जो देखने को है, न कि बताने को। स्थानीय प्रकार की पत्रकारिताओं का होना स्वंय इस बात का जीता जागता सबूत है। (यहाँ 'स्थानीय' का शब्द शहर या बस्ती के आधार पर या भाषाई छुटभय्यों के लेहाज़ से नहीं वरन् विश्व पत्रकारिता की अपेक्षा निचले स्तर और कम

प्रभाव-क्षेत्र की पत्रकारिता के लिए प्रयोग किया गया है।) यह विश्व पत्रकारिता में अपनी तत्सम्बन्धित स्थितियों की असुरक्षा का भाव ही है जिसने स्थानीय पत्रकारिताओं को जन्म दिया है। 'विश्व भाषा' के अतिरिक्त दूसरी भषाओं की पत्रकारिता का अस्तित्व तो समझ में आता है परन्तु 'मुस्लिम पत्रकारिता', 'भारतीय-पत्रकारिता' या 'अफ्रीक़ीय पत्रकारिता' जैसी स्थानीय पत्रकारितओं का सबोध अस्तित्व समझ में नहीं आता। इन अस्तित्वों के माने हैं कि विश्व पत्रकारिता को चाहे जितना संतोषजनक कह लिया जाए, ज़मीन पर अपनी वान्छनीय साख बिठाने में असफ़ल ही रही।

'मुस्लिम पत्रकारिता' और 'भारतीय पत्रकारिता' के सम्बन्ध से लगता है कि इनके पीछे प्रतिक्रियावादी झुकाव या 'कोष्ठक बन्द' या निराशावादी विरोधीय मानसिकता है। (इसके दूसरे कुछ कम महत्वपूर्ण कारण भी हो सकते हैं।) भारत की जनसंख्या या दुनिया में मुस्लिम आबादी (जो लगभग बराबर है) विश्व समाज का बड़ा ही सगण्य अंश बनाती है, फिर भी विश्व पत्रकारिता में 'मुस्लिम' लगभग नदारद हैं और यही बात 'भारतीय' की है। विश्व पत्रकारिता में मुस्लिम या भारतीय की हैसियत अछूत से ज़्यादा नहीं दिखाई देती है। जहाँ मुस्लिम की आम छवि 'आतंकवादी' या फिर संसार से कटे हुए और टोपीधारी निखट्टू से ज़्यादा नहीं, वहीं 'भारतीय' की छवि भी पिछड़े, भिखारी और एक हद तक 'आतंकवाद' को शरण देने वाले से अलग हट कर नहीं उभरती। ऐसे में मुस्लिम पत्रकारिता या भारतीय-पत्रकारिता का अपने वर्तमान रूप में 'विकास' कोई अप्रकृतिक नहीं लगता। खुली हुई बात है कि विश्वपत्रकारिता के सापेक्ष मुस्लिम पत्रकारिता या भारतीय पत्रकारिता लगभग हर तरह से बड़ी दरिद्र है। अपने संसाधनों और कुशलता पूर्ण मानवशक्ति की कमी और उससे पैदा हुई खुली गुणात्मक गिरावट के एहसास के होते हुए भी उनका मैदान में आ जाने का अर्थ है:

बुद्धु मियाँ भी हज़रते गाँधी के साथ हैं।
गो मुश्ते ख़ाक हैं मगर आँधी के साथ है।।

(यहाँ भारत की स्वतंत्रता से पहले वाले गाँधी जी की बात है।)

अगर उर्दू पत्रकारिता की बात की जाय तो इसे भाषाई मैदान में विश्व पत्रकारिता के समान्तर होना चाहिए, किन्तु माँग और गुण के लेहाज़ से विश्व पत्रकारिता का दर्पण होना चाहिए, मगर वास्तव में ऐसा नहीं है। यहाँ उर्दू को अपने भाषाई सौन्दर्य और आकर्षण को विश्वस्तर पर अंकित करने का अच्छा अवसर भी था, परन्तु......। अब उर्दू पत्रकारिता (दिल्ली और पंजाब क्षेत्रों को कुछ हद तक छोड़कर) पूरी तरह 'मुस्लिम पत्रकारिता' बन चुकी है। यह उर्दू के लिए और स्वयं पत्रकारिता के लिए बड़ा श्राप है। कुछ यही बात है कि उर्दू पत्रकारिता स्वयं उर्दू की बात सुभित्ते से न रख सकी।

हिन्दी पत्रकारिता का हाल भी उर्दू जैसा है। बस अन्तर यह है कि यह बड़ी हद तक 'हिन्दू पत्रकारिता' के रूप में विकसित हुई।

उर्दू पत्रकारिता हो, मुस्लिम पत्रकारिता हो या भारतीय पत्रकारिता हो, उसे अपने वर्तमान ऋणात्मक (Negative) तरीक़े के बजाए 'सामने' आकर दुनिया की आँखों में आँखें डालकर विश्व पत्रकारिता के गुण और 'चरित्र' में विलीन होकर उसे सही दिशा देने में प्रभावी रोल करना चाहिए। 'उर्दू', 'मुस्लिम' और 'भारतीय' सभी क़ायदे से सत्य और न्याय का झण्डा ऊँचा कर सकते हैं। उनमें इसकी आधारभूत योग्यता भी है और यह उनका प्राकृतिक अधिकार भी है। 'भारत' का ज्ञान से सम्बन्ध और मुस्लिम का ज्ञान व क़लम से रिश्ता बड़ा पुराना और 'आवश्यक' है। उर्दू भी एक सक्षम विकासशील और विस्तारोन्मुख ज्ञान-भाषा के रूप में अपना सिक्का जमा चुकी है। (बहुत पहले ही)।

स्थानीय पत्रकारिता के प्रकार में 'शिया' पत्रकारिता का नाम भी लिया जा सकता है (अगर उसे पत्रकारिता का वर्ग दिया जा सके) यहाँ सिर्फ़ भारतीय शिया पत्रकारिता के सम्बन्ध में बात है। जो भी हो शिया पत्रकारिता में 'समाज' से ज़्यादा 'धर्म' छाया हुआ है। इसका कारण जो भी हो, शिया बुद्धजीविता और शिया नेत्रत्व पर उलमा और धर्मगुरुओं का 'प्रभुत्व' और प्रभाव या 'शिया' का धर्मोत्साह, बहरहाल शिया पत्रकारिता

धार्मिक होकर रह गई है। शायद आक़ाए ख़ुमैनी के ईरानी इन्क़ेलाब ने इसके राजनैतिक उत्साहवर्धन और सामाजिक प्रौढ़ता के पीछे बड़े काम का रोल किया है। (मेरे टूटे-फूटे विचार से मज़हब धर्म पत्रकारिता का विषय नहीं बन सकता। इसके माने शिया पत्रकारिता बेमाने निर्थक होकर रह जाती है। इसे शिया पत्रकारिता के बदले शिया 'पत्रिका', संपादन कहा जाय तो कोई आपत्ति नहीं)

इन शिया पत्रिकाओं में सामाजिक (पत्रकारिता सम्बन्धी) छींटें बस शोक समाचार या और भी कम स्तर पर मजलिस, महफिल, जुलूस के समाचार की मुर्दा सी रिर्पोटिंग तक सीमित होते हैं। [शिया पत्रकारिता या शिया पत्रिकाओं की समाज से ये मुँह फिराई यहीं तक सीमित नहीं है बल्कि (कम से कम भारत में) शिया धर्मशास्त्र के प्रथिमिकी/प्राइमरों में भी यही कुछ मिलता है। कुछ यही कारण है कि इबादत की आम धारणा रोज़ा नमाज़ में सीमित होकर रह गयी है।]

अन्त में आज की ताज़ा ख़बरः आज का नया समाचार, एक नये साप्ताहिक 'वायज़' का आगमन.... .... स्वागतम! इस बारे में 'नूरे हिदायत फ़ाउण्डेशन', लखनऊ पूरी उम्मीद से है। आशा है यह वायज़ कम से कम उर्दू शायरों वाले वायज़ (उपदेशक) की छवि से अलग होगा। इसके प्रकाशन पूर्व विज्ञापन से यह पता चलता है कि इसके संस्थापकों के विचार में इसे 'दस्तावेज़ी' Documentry तरह से शिया इन्साईक्लोपीडिया का रूप देना है। एक साप्ताहिक में (धरावाहक) इन्साइक्लोपीडिया (विश्वकोष) का आकार उभारन बड़ा साहसिक क़दम और इन्क़ेलाबी सोच है। इस सम्पादकीय कार्य को जनता की नज़र क्या मान देती है इसके बारे में कुछ कहना समय से पूर्व है। दुआ तो हर स्थिति में की जा सकती है। फिर उक्त पत्रिका शायद इस 'दस्तावेज़ी' आकार में सीमित न रहेगी, बल्कि इसका सामाजिक कोण भी होगा जैसा कि पत्रिका के नामित सम्पादक महोदय ने अपनी एक बातचीत में अभिव्यक्त किया है कि इसमें 'ऋणात्मक' सामाजिक पहलू बिल्कुल नहीं होगा। यानी शियों के आपसी भेदभाव जो उनके भाग्य बन चुके हैं उन्हें दरकिनार कर दिया जायेगा, विरोक्ष पक्ष को भी साथ लिया जायगा। पत्र की हद तक भेदभाव को मार दिया जायगा। यह बड़ा ही नेक पुण्य काम है। पत्रकारिता भेदभाव को हवा देने के लिए नहीं, उसे हवा करने के लिए होती है।

मुझे निजी रूप से सबसे ज़्यादा इसी की ख़ुशी होगी कि 'वायज़' अपने एकता (एकजुटता) अवतार में पूरे शिया समाज को साथ लेकर चले और अपनी उन्नति के चरण को पूरा करे कि अन्ततः इससे शिया लेबिल भी छुट जाय और सच्चा मानवीय/विश्व अन्दाज़ उभर आये।

'वायज़' के स्वागत को साक्षात अपेक्षा बन कर आशा करता हूँ कि 'वायज़' किसी भी तरह हमारे शायरों के ताने वाला 'वायज़' न हो। चलते-चलते दुआ हैः-
'अल्लाह करे लेखनी बल (और भरम) और ज़्यादा'

□□□